WE
Vol 1 No. 1-2
June-Dec 2020

दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के विद्यार्थियों की हिंदी शिक्षण संबंधी आवश्यकताएँ, समस्याएँ और अपेक्षाएँ

मोहन*

हिंदी आधुनिक विश्व की एक महत्वपूर्ण और ज़रूरी भाषा है। यह भारत की सामासिक संस्कृति, विविधतापरक सभ्यता, बहुरंगे जन-जीवन के साथ-साथ यहाँ के जीवंत लोकतांत्रिक सरोकारों की मुखर पहचान है। संक्षेप में कहें तो हिंदी इस बहुरंगे-बहुरूप भारत को जानने का महत्वपूर्ण साधन है। आज जिस प्रकार दुनिया भर में अनेक कारणों से हिंदी सीखने-सिखाने की माँग बढ़ी है, उससे इस भाषा को देखने-परखने की दृष्टि में उल्लेखनीय बदलाव आया है। भाषा-शिक्षण के मौजूदा परिदृश्य में हिंदी की माँग का एक बड़ा और महत्वपूर्ण कारण विश्व बिरादरी और विश्व बाज़ार में भारत की उभरती हुई पहचान है|

आज विश्व के लगभग 100 देशों में या तो जीवन के विविध क्षेत्रों में हिंदी का प्रयोग होता है या फिर इन देशों में हिंदी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। एशिया महाद्वीप में, भारत जिसकी एक महत्वपूर्ण भू-राजनैतिक एवं भाषिक-सांस्कृतिक इकाई के रूप में विद्यमान है, यहाँ भारत के अलावा पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, म्यंमार (बर्मा), चीन, जापान, दक्षिण कोरिया, मंगोलिया, उजबेकिस्तान, ताजिकस्तान, तुर्की और थाईलैंड देशों में हिंदी अध्ययन-अध्यापन की पुरानी परंपराएँ हैं। हिंदी इन तमाम देशों में अलग-अलग तरीक़े से अपने अनेक रूप, अनेक नाम, अनेक कारणों और अनेक प्रयोजनों के साथ अपनी ज़रूरत और मौजूदगी दर्ज कराती है। दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के साथ भारत के सांस्कृतिक संबंध संभवतः इतिहास के सर्वाधिक जीवंत और आकर्षक अध्याय हैं। ईस्वी कालगणना से भी सैकड़ों-हज़ारों साल पहले से चले आ रहे ये संबंध यहाँ के जन-जीवन के लगभग हर पहलू से जुड़े हैं।

लगभग समूचे दक्षिण-पूर्व एशिया में संस्कृति का आलोक भारत से प्रसारित हुआ। इसकी शुरूआत को ईसा पूर्व पाँचवीं शताब्दी के आस-पास पश्चिमी भारत के उपनिवेशों की लंकाद्वीप में स्थापना के साथ देखा जा सकता है, जिन्होंने बाद में अशोक के समय में बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। इसी दौरान कुछ भारतीय व्यापारी मलाया, सुमात्रा तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के अन्य भागों में आने जाने लगे थे। धीरे धीरे उन्होंने स्थायी बस्तियाँ स्थापित कर लीं। अपनी सभ्यता के प्रचार-प्रसार और स्थायी राजनीतिक-व्यापारिक प्रयोजनों के लिए उन्होंने स्थानीय कबीलों के साथ विवाह संबंध कायम किए। व्यापारियों के पश्चात वहाँ ब्राह्मण तथा बौद्ध भिक्षुक पहुँचे। बाद में स्थानीय लोक परंपराओं और भारतीय संस्कृति के मिले-जुले प्रभाव ने धीरे-धीरे वहाँ की स्वदेशी संस्कृति को आकार देना शुरू किया। लगभग चौथी शताब्दी तक आते-आते संस्कृत उस क्षेत्र की राजभाषा और व्यापक संपर्क भाषा के रूप में देखी जाने लगी। इस प्रकार भारतीय संस्कृति के प्रभाव से वहाँ ऐसी महान सभ्यताएँ विकसित हुईं।

*Professor, Department of Hindi, University of Delhi, Delhi-110007; Mob 9871115500. Email: mohanhindi.du@gmail.com.

जो विशाल समुद्रतटीय साम्राज्यों का संगठन करने तथा जावा में बोरोबुदुर का बुद्ध स्तूप अथवा कम्बोडिया में अंगकोरवाट के शैव मंदिर जैसे आश्चर्यजनक स्मारक निर्मित करने में समर्थ हुई। दक्षिण-पूर्व एशिया में अन्य सांस्कृतिक प्रभाव चीन एवं इस्लामी संसार द्वारा भी ग्रहण किए गए लेकिन सभ्यता की प्रारंभिक प्रेरणा भारत से ही प्राप्त हुई। अनेक भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासकार प्राय: इस क्षेत्र को 'वृहत्तर भारत' का नाम देते हैं तथा भारतीय उपनिवेशों का वर्णन करते हैं। लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि ये 'उपनिवेश' पूंजीवादी और विस्तारवादी युद्धधर्मी सभ्यता के विजय-स्मारक नहीं थे। ये सभी भारतीय उपनिवेश प्रायः शांतिप्रिय और आध्यात्मिक संस्कारपरक थे। इनके मूल में शिक्षा-बंधुता और जन-उत्थान का भाव था। यही वजह है कि भारत के ये सांस्कृतिक उपनिवेश देश-काल और भूगोल के पटल से कभी मिट नहीं सके। ये आज भी अपनी परंपरा की ख़ुशबू और समसामयिक प्रासंगिकता-बोध के साथ आज भी मौजूद हैं।

अपने प्रस्तुत आलेख की विषय-सीमा का ध्यान रखते हुए अगर केवल थाईलैंड की बात करें, तो यह कहना बिलकुल भी अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि भारत और थाईलैंड, ये दो देश ऐसी दो देह के समान हैं जिनका मन-प्राण मूलतः एक ही है। इतिहास और संस्कृति के अनेक साझे अध्यायों के अलावा भाषा और साहित्य की सन्निधियाँ भी इन्हें करीब से जोड़ती हैं। थाईलैंड रामकथा और रामराज का नवलोक होने के साथ-साथ करुणामयी बुद्धवाणी का धम्मक्षेत्र भी है। यहाँ के जीवन में वैभव और वैराग्य का सह-अस्तित्व है। परंपरा और आधुनिकता का सुरुचिपूर्ण मिलाप यहाँ के लोक-जीवन की सामान्य पहचान है। यह देश अपने आध्यात्मिक मौन में मुखर होता है। अपने दार्शनिक चिंतन के माध्यम से बोलता है। यहाँ की जुझारू जन-जातियों और चक्रवर्ती राजवंशों का मिथक-मिश्रित इतिहास शोधार्थियों के अध्ययन का पसंदीदा विषय हैं।

इन सबके अलावा यह देश समृद्ध भाषाई विरासत की भूमि है। संस्कृत और पालि की कड़ी में हिंदी आज इन दो देशों के साझे संबंधों की वाहिका है। यूरोप और दुनिया के तमाम दूसरे देशों की तरह हिंदी इनके लिए भारत को जानने का माध्यम मात्र नहीं है क्योंकि यह देश तो पहले से भारत को अपने जीवन और अनुभव में समाए हुए है। दुनिया भर के लिए भारत एक बड़ा और सकारात्मक संभावनाओं से भरा बाज़ार है। यह तथ्य हिंदी के विश्वव्यापी शिक्षण के पक्ष में एक महत्वपूर्ण कारक है। लेकिन हिंदी इन दोनों देशों यानी थाईलैंड और भारत के लिए भाषा के प्रयोजनमूलक व्यापारों से कहीं अधिक महत्व रखती है। निस्संदेह संस्कृत हमारी संस्कृति का आधार है, लेकिन हिंदी हमारे भविष्योन्मुखी संवाद का द्वार है। हिंदी वस्तुतः इन दोनों देशों के बीच वर्तमान संभावनाओं के नये रास्ते खोलती है।

संभवतः यही कारण है कि कुछ समय पूर्व थाईलैंड की प्रधानमंत्री की भारत यात्रा के दौरान जिन महत्वपूर्ण मुद्दों पर बातचीत हुई उनमें हिंदी की बात भी शामिल थी। इसके मूल में हमारे पुरातन राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संबंधों के अलावा वर्तमान समय की द्विपक्षीय अपेक्षाएँ और आवश्यकताएँ भी हैं। इस प्रकार हिंदी के माध्यम से भारत और थाईलैंड के पुराने रिश्तों को नये मायने मिलते हैं। अपने इस आलेख के माध्यम से मैं दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों और विशेषतः थाईलैंड में हिंदी-शिक्षण की स्थितियों, अपेक्षाओं और समस्याओं की चर्चा कर रहा हूँ ताकि इसका उपयोग उनके लिए स्पष्ट और निदानात्मक शिक्षण कार्यक्रम, अध्ययन-अध्यापन सामग्री और उपयुक्त शिक्षण-प्रविधि डिजाइन करने में किया जा सके।

दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों, विशेषतः थाईलैंड के विद्यार्थियों की हिंदी अधिगम संबंधी प्रवृत्तियाँ

- भारत के विश्वविद्यालयों और संस्थानों में हिंदी भाषा सीखने के लिए आने वाले दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के विद्यार्थियों के बारे में आम राय यह है कि वे थोड़े-बहुत गुणात्मक और उद्देश्यगत अंतर के साथ अध्ययन को लेकर पर्याप्त परिश्रमी, गंभीर और लक्ष्य केंद्रित होते हैं। यह बात थाईलैंड के विद्यार्थियों के बारे में भी लागू होती है।
- थाईलैंड विद्यार्थियों की अधिगम अभिरुचि इस क्षेत्र के अन्य देशों की तुलना में अधिक संस्कृतिनिष्ठ होती है। अपने देश में वे जो भाषा-शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं, वह स्तरीय और गुणवत्तापूर्ण होता है। यहाँ भाषा का अध्ययन-अध्यापन धर्म, अध्यात्म, मूल्यबोध और जीवन-कौशल पर केंद्रित है। भाषा के समकालीन प्रयोग और सामान्य व्यवहारों से अधिक और आगे देखने की जिज्ञासा इसके मूल में है। किंतु इसकी एक बड़ी सीमा यह महसूस की गई है कि इसमें चारों कौशलों के संतुलन का अभाव है।
- विशेषतः मौखिक अभिव्यक्ति को लेकर इस क्षेत्र की कुछ सामान्य समस्याएँ हैं। कुछ समस्याएँ विशिष्ट उच्चारणपरक हैं, जिनका समाधान नियमित उच्चारण-अभ्यास द्वारा किया जा सकता है किंतु समस्या का बड़ा कारण मौखिक कौशल को लेकर शिक्षार्थियों का पैसिव-एटीट्यूड है। इसी वजह से इनका अधिगम प्रदर्शन उत्तम श्रेणी का होकर भी समग्र और समावेशी नहीं हो पाता।
- इस बात को स्वीकार करने में कोई दिक्कत नहीं है कि हिंदी पाठ्यक्रम को दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों और स्थानीय शिक्षण-स्तर एवं उनके अपने हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर डिज़ाइन करना चाहिए। पाठ्यक्रम इतना व्यापक, स्तरीकृत, लचीला एवं स्पष्ट होना चाहिए जिससे शिक्षक एवं अध्येता का मार्गदर्शन हो सके।
- विभिन्न भाषाई कौशलों के शिक्षण और संवर्धन की दृष्टि से शिक्षण अधिगम सामग्री-निर्माण के लिए स्थानीय आवश्यकताओं और भाषावैज्ञानिक समस्याओं पर केंद्रित शैक्षिक परियोजनाएँ तैयार की जानी चाहिए।
- शिक्षण-प्रशिक्षण में आधारभूत शब्दावली का महत्वपूर्ण स्थान होता है। विदेशी विद्यार्थियों के लिए शिक्षण सामग्री-निर्माण, पाठ्यपुस्तकों की रचना, पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्याओं के डिज़ाइन में इसकी विशेष उपयोगिता होती है। यह उल्लेखनीय है कि प्रयोक्ता देश और समाज के अनुसार प्रयुक्त शब्दों की आवृत्तियाँ बदलती रहती हैं। अतः विदेशी अध्येताओं के भाषा-शिक्षण के उद्देश्य एवं लक्ष्य को ध्यान में रखकर आवृत्ति के आधार पर आधारभूत शब्दावली के निर्माण का कार्य होना चाहिए। इसे अगर प्रस्तुत आलेख के विषय क्षेत्र के संदर्भ में कहें तो दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों की हिंदी अधिगम संबंधी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए आधारभूत शब्दावली और अन्य शिक्षण सामग्री का निर्माण किया जाना चाहिए। धर्म-अध्यात्म-पुराशास्त्र, इतिहास, संस्कृति आदि के वास्तविक व्यवहार की जो रेंज थाई विद्यार्थियों के लिए आवश्यक और अपेक्षित है, वह उनकी आधारभूत शब्दावली के अंतर्गत सम्मिलित की जानी चाहिए।
- दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार की चर्चा करें तो यह विशेष उल्लेखनीय तथ्य है कि ये विद्यार्थी अपने शैक्षणिक उद्देश्यों के प्रति विशेष सजग होते हैं। कुछ देशों (विशेषतः दक्षिण कोरिया) के विद्यार्थी भारत में कार्यरत बहुराष्ट्रीय कंपनियों में रोज़गार पाने के लिए हिंदी भाषा सीखना चाहते हैं। ऐसे विद्यार्थियों के हिंदी-अधिगम के प्रयोजन वृहत्तरज्ञानपरक न होकर विशिष्ट रोजगारपरक होते हैं। किंतु एक अन्य वर्ग ऐसे विद्यार्थियों का भी है जिनके लिए संस्कृति-इतिहास-पुरातत्व आदि भारतविद्या (इंडोलॉजी) संबंधी अध्ययन अधिक महत्वपूर्ण है। ऐसे विद्यार्थियों का काम केवल सीमित साँचा-अभ्यास और आधारभूत शब्दावली से नहीं चलता। उनके अध्ययन की रेंज और आवश्यकता दोनों व्यापक होती है। उनके लिए उनकी आवश्यकता और रूचि के अनुरूप सामग्री विकसित की जानी चाहिए।

- फिर भी इस बात की पर्याप्त आवश्यकता है कि दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों के लिए वास्तविक भाषा-व्यवहार को आधार बनाकर व्यावहारिक हिंदी संरचना : ध्वनि-संरचना, शब्द-संरचना तथा पदबंध-संरचना के अनुप्रयोगात्मक पाठों का निर्माण किया जाए। यह इन विद्यार्थियों की पहले स्तर की ज़रूरत है। यह कार्य करते समय समस्त सामग्री का निर्माण अभिक्रमित रूप में किया जाए और उनके अधिगम की जाँच के लिए प्रत्येक बिन्दु पर विभिन्न स्तरीकृत अभ्यासों की योजना भी होनी चाहिए। द्वितीय स्तर पर इन विद्यार्थियों के लिहाज से भाषा संरचना के साथ-साथ इतिहास, साहित्य-संस्कृति आदि विषयों की भी ज़रूरत है।
- शिक्षण-संस्थानों में कराए जाने वाले भाषा-शिक्षण को लेकर अनेक विद्यार्थियों का यह भी फीडबैक होता है कि बाज़ार और रोजमर्रा के क्षेत्रों में बोली जाने वाली हिंदी के प्रयोग और संरचनाएँ व्याकरण और पाठ्यपुस्तकों के प्रयोगों से बहुत अलग हैं।
- विद्यार्थियों को वह भाषा चाहिए जिसका इस्तेमाल बाहर होता है। वे अर्थ चाहिए, जो और जैसे बाहर की दुनिया में इस्तेमाल होते हैं। उनके लिए पर्यायों के बीच के सूक्ष्म अंतर को स्पष्टतः समझना अधिक जरूरी है। शब्दकोशों से व्यवहारगत प्रोक्ति की सीमा में जाने पर शब्दों के अर्थ किस प्रकार बदल जाते हैं, यह सीखना उनके लिए बहुत जरूरी है। हिंदी के आर्थी प्रयोगों को स्पष्ट करने के लिए सामग्री का निर्माण होना चाहिए।
- इस लिहाज से थाई-हिंदी, हिंदी-थाई प्रयोक्ता कोशों का निर्माण, वास्तविक भाषा-व्यवहार की आवृत्ति के आंकड़ों की प्रस्तुति और विश्लेषण करने वाले स्पीच और टैक्स्ट कॉर्पोरा की उपलब्धता एक बड़ी आवश्यकता है। थाई विद्यार्थियों के लिहाज से ऐसे टैक्स्ट कॉर्पोरा की भी आवश्यकता है जहाँ वे अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक आवश्यकता के अनुरूप पाठ का संधान और अनुसंधान कर सकें।
- आरंभिक, माध्यमिक और उच्चतर स्तर के विद्यार्थी वर्ग की आवश्यकताएँ अलग-अलग हैं। कई बार हिंदी इनके लिए संस्कृत से जुड़ने का और उसे समझने का माध्यम भी होती है। या फिर ऐसा भी देखा गया है कि हिंदी सीखते समय वे संस्कृत संरचनाओं के साथ व्यतिरेक देखते और तलाशते हैं। इस स्थिति को ध्यान में रखकर हिंदी में कंप्यूटर साधित भाषा-शिक्षण सामग्री के निर्माण के लिए ऐसी यूजर फ्रेंडली सिस्टम का विकास किया जाना जरूरी है जिससे स्वतः अधिगम के आधार पर हिंदी सीखने और हिंदी में काम करनेकी सुविधा मिल सके। अध्येताओं की जरूरत को ध्यान में रखकर 'स्पेल चैकर' तथा 'आन-लाइन शब्दकोश' की सुविधा का भी विकास किया जाना चाहिए।
- दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों के उच्चारण और मौखिक कौशल विकास की चर्चा करें तो यह स्पष्ट करना ज़रूरी है कि इस दृष्टि से दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों की विशिष्ट उच्चारणगत समस्याएँ हैं। बहुत प्रयत्न के बावजूद उनका उच्चारण उतना स्पष्ट और मानक नहीं हो पाता जितना अपेक्षित होता है। यह अवश्य है कि कुछ स्वस्थ अपवाद हमेशा हर जगह मिल जाते हैं परंतु व्यापक तौर पर दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों का हिंदी उच्चारण एक सीमा के बाद अधिगम पठार पर आकर रुक जाता है।
- यह बात चर्चा और बहस का विषय हो सकती है कि मानक और स्पष्ट उच्चारण की अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में परिभाषा और आवश्यकता क्या है लेकिन संस्थान के प्राध्यापकों के एक सामान्य अवलोकन के अनुसार- ''दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थी लेखन कौशल के मामले में जितना आगे होते हैं उतना ही वे सही उच्चारण के मामले में पिछड़ जाते हैं।'' इसके जैव-भाषा वैज्ञानिक, मानव-वैज्ञानिक, मनो-कायिक या भाषा-भौगोलिक जो भी कारण हैं उनका सतर्क और स्पष्ट आकलन-विश्लेषण अपेक्षित है।
- इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए दक्षिण-पूर्व एशियाई विद्यार्थियों के लिए हिंदी में उच्चारण शिक्षण पैकेजका विकास होना चाहिए। साथ ही कंप्यूटर आधारित भाषा-प्रयोगशाला के उपयोग में आने वाली अन्य सॉफ्टवेयर सामग्री का भी निर्माण होना चाहिए।

- हिंदी के अंतरराष्ट्रीय प्रचार-प्रसार और शैक्षणिक विकास के लिहाज से हिंदी में ऐसे पोर्टल अथवा ऑनलाइन संवाद-क्षेत्र विकसित करने की जरूरत है जिससे कोई भी विदेशी अध्येता हिंदी से सबंधित बहुआयामी जानकारी हासिल कर सके। ओपनसोर्स साफ्टवेयर इस दृष्टि से विशेष उपयोगी हो सकते हैं।
- हमें हिंदी के ऐसे लोकलाइजेशन ग्रुप विकसित करने की आवश्यकता है जिनसे हिंदी-शिक्षण की वृहत्तर अंतरराष्ट्रीय और विशिष्ट क्षेत्रीय भाषा-शिक्षणपरक समस्याओं का निदान हो सके, जहाँ हिंदी भाषा-संसाधन के बेहतर सॉफ्टवेयर-उपकरण मिल सकें और भाषा-शिक्षण प्रौद्योगिकी से जुड़ी नवीनतम सूचनाओं और उपलब्धियों के सूत्र हासिल हो सकें। जहाँ शिक्षार्क्षी हिंदी अधिगम के अंतर्गत ध्वनि, लिपि, शब्द, भाषा-प्रयोग आदि से जुड़ी अपनी संमस्याओं के संबंध में अपने विचार दे सकें। जहाँ वे विभिन्न विषयों पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकें और प्रस्तुत विचार-सामग्री में संशोधन प्राप्त कर सकें।
- अंतरराष्ट्रीय फलक पर हिंदी को निरंतर समृद्ध बनाने की दिशा में देश-विदेश के अनेक विद्वान हिंदी शिक्षकों, भाषाविदों ने निरंतर कार्य किया है और आज भी कर रहे हैं। इन सबके प्रयासों से ही हिंदी के शैक्षणिक विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है। ऐसे शिक्षकों के शैक्षणिक नवीकरण और पुनश्चर्या प्रशिक्षण कार्यक्रमों को विस्तार देने की जरूरत है।
- आज हिंदी अपनी वैश्विक पहचान बनाने की दिशा में तेज़ी के साथ आगे बढ़ रही है। लेकिन इस दिशा में अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है। निस्संदेह हिंदी के अंतरराष्ट्रीय शिक्षण-अनुसंधान मार्ग में अनेक चुनौतियाँ हैं । फिर भी हिंदी संभावनाओं का एक ऐसा द्वार है जो विकास और सर्जनात्मकता के लिए सदैव खुला रहता है।
- हिंदी के अंतरराष्ट्रीय विस्तार के साथ संभव हुए वैश्विक संवाद के जरिए इस भाषा को नई चेतना, नई ऊर्जा और आधुनिकताबोध हासिल हुआ है। ज्ञान-विज्ञान की नई अवधारणाओं के साथ इसमें अनेक नए शब्दों की सर्जना हुई है, हो रही है, लेकिन हिंदी की व्यापक स्वीकृति और विकास के लिए इसमें समावेशिकता और सरलता के मुद्दों पर दूरदृष्टि और संवेदनशीलता से काम करने की ज़रूरत है।
- आज दुनिया भर के देशों में हिंदी की भाषिक संरचना और अन्य आयामों को लेकर अनुसंधान हो रहे हैं। इस तरह के कार्यों को थाईलैंड सहित इस क्षेत्र के विभिन्न देशों में और भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। थाई विद्यार्थी भारत आकर अच्छी हिंदी सीखें, अपना हिंदी ज्ञान संवर्धन कर अपने देश में हिंदी के सुयोग्य अध्यापक बनें और अपने दूसरे मित्रों और आने वाली पीढ़ियों को भी शिक्षित-प्रशिक्षित करें, इससे दोनों देशों के संबंध और भी मजबूत बनेंगे।
- अपने आलेख के अंत में मुझे गुरुदेव रवींद्रनाथ का स्मरण करना प्रासंगिक लग रहा है। रवींद्रनाथ टैगोर के अनुसार- ''जीवन और शिक्षा का उद्देश्य एक दूसरे पर हावी हो जाना नहीं है, एक-दूसरे के साथ सामंजस्य की स्थापना है| भारतीय अस्मिता और इतिहास के प्रति निष्ठावान होने का अर्थ कट्टरपंथी होना भी नहीं है|''1 रवींद्रनाथ टैगोर जीवन का एकमात्र लक्ष्य शिक्षा के आलोक का विस्तार मानते थे। अगर गुरुदेव टैगोर के इस कथन को संस्कृत के मेधावी आचार्य दंडी की उक्ति "वाचामेवप्रसादेन लोकयात्रा प्रवर्तते" के साथ मिलाकर पढ़ा जाए तो भाषा-शिक्षण का महत्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है।
- भाषा ही शिक्षा का आलोक है। भाषा के आलोक से ही शिक्षा का और जीवन का आलोक फैलता है और यह आलोक ही सबके भीतर अंतःप्रज्ञा एवं चेतना का प्रसार करता है। 1925 में जहाज से यूरोप की यात्रा के दौरान रवींद्रनाथ टैगोर ने लिखा है कि ''मेरे मत में शिक्षा नीति को बैरागी के पथ का अनुसरण करना चाहिए |जीवन-प्रवाह के अनुरूप शिक्षा होनी चाहिए | हमें चाहिए कि अपने छात्रों के साथ हम अज्ञात की तलाश में निकल पड़ें|''2 व्यक्ति तथा समाज के विकास में रवींद्रनाथ टैगोर ने इसी चेतना की भूमिका को महत्वपूर्ण माना है। यही मानव-समाज के भविष्य का पथ-निर्देश करती है। भविष्य के प्रति सचेत और सकारात्मक यही दृष्टि हमारे समग्र

आधुनिकता-बोध को अग्रगामी बनाकर हमारी भाषाओं के परस्पर संवाद के रास्ते खोलती है।

- इस दृष्टि से वर्तमान विश्व में हिंदी की भूमिका महत्वपूर्ण है। विशेषतः भारत और एशिया-प्रशांत देशों के बीच भारतीय संस्कृति की परंपरागत और नई पहचान के प्रति सही दृष्टि और आपसी-समझ का आदान-प्रदान करने में इसका उल्लेखनीय योगदान है और रहेगा। मेरा पूर्ण विश्वास है कि यदि हम मिलजुलकर हिंदी के इस आलोक पथ पर अग्रसर होंगे, परस्पर सहयोगपूर्वक संवाद-संस्कृति के पुल बनाएँगे तो निश्चित तौर पर विश्व-बंधुता का सपना साकार होगा। हमारी वर्तमान और आने वाली पीढियाँ समसामयिक जीवन मूल्यों की रक्षा और दृश्य-अदृश्य चुनौतियों का सामना कर पाने में समर्थ हो सकेंगी और यह भाषा थाईलैंड और भारत के मैत्री संबंधों की मजबूत कड़ी बनकर उभरेगी।

संदर्भ-ग्रंथ:

1. घोष, शिशिर कुमार : (हिंदी अनुवाद अनामिका) : रवींद्रनाथ ठाकुर, पृष्ठ 82, साहित्य अकादेमी, रवींद्र भवन 35 फ़ीरोजशाह मार्ग नई दिल्ली 110001 प्रथम संस्करण 1996, पुनर्मुद्रण 2009
2. वही, पृष्ठ, 86

सहायक ग्रंथ:

1. बंद्योपाध्याय, असित कुमार (संपादक) : रवींद्र रचना संचयन, साहित्य अकादेमी 35 रवींद्र भवन फ़ीरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली- 110001, प्रथम संस्करण 1987 पुनर्मुद्रण 2009
2. श्रीवास्तव,रवींद्रनाथ, हिंदी भाषा : संरचना के विविध आयाम, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड अंसारी मार्ग दरियागंज नई दिल्ली -110002 पहली आवृत्ति 1999
3. घोष, शिशिर कुमार : (हिंदी अनुवाद अनामिका) : रवींद्रनाथ ठाकुर, पृष्ठ 82, साहित्य अकादेमी, रवींद्र भवन 35 फ़ीरोजशाह मार्ग नई दिल्ली- 110001 प्रथम संस्करण 1996, पुनर्मुद्रण 2009
4. पांडे, हेमचंद्र, भाषा : स्वरूप और संरचना, ग्रंथलोक वेस्ट गोरख पार्क, शाहदरा दिल्ली- 110032 प्रथम संस्करण 2006
5. सिंह, दिलीप, भाषा का संसार, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली- 110002 प्रथम संस्करण 2008
6. सिंह,दिलीप, अन्य भाषा-शिक्षण के बृहत् संदर्भ, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली-110002,प्रथम संस्करण 2010
7. गवेषणा संचयन, आगरा, केंद्रीय हिंदी संस्थान, प्रथम संस्करण, 2008
8. श्रीवास्तव,रवींद्रनाथ,भाषा-शिक्षण,वाणी प्रकाशन,दरियागंज,नईदिल्ली-110002,
9. संस्करण : 1992